इकाई 35 दक्खन और दक्षिण भारत के राज्य

इकाई की रूपरेखा

35.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- दकन और दक्षिण भारत में उदय होने वाले राज्य विशेषकर बादमी के चालुक्यों और कांची के पल्लवों के विषय में जान सकेंगे,
- इन राज्यों के बीच के संबंध समझ सकेंगे,
- हमारे काल के राजनीतिक इतिहास को समझने में भूगोल की भूमिका, और
- इस बात की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे कि इन राज्यों में जनता पर किस तरह शासन होता था?

35.1 प्रस्तावना

विंध्य के दक्षिण में पड़ने वाले भारत के भाग को लोग दक्षिण भारत या दक्खन कहते हैं। यह विभाजन दरअसल प्राचीन भारत के उस समय से ही चला आ रहा है, जब विंध्य के दक्षिण में पड़ने वाला क्षेत्र दक्षिणपथ या दक्षिणी क्षेत्र कहलाता था। दक्खन मध्य युग में आकर दक्कन हो गया, जिससे दकन शब्द निकला है। लेकिन इतिहासकारों और भूगोलविदों को मुख्य दकन को शेष दक्षिण भारत से अलग करके देखना उपयोगी लगा है। दक्खन में महाराष्ट्र और उत्तरी कर्नाटक आ जाते हैं, और गोदावरी और कृष्णा के दुहरे डेल्टा भी। इसी रीति का अनुसरण करते हुए, हम दक्खन और दक्षिण भारत की बात विंध्य के दक्षिण

में पड़ने वाले दो क्षेत्रों के रूप में करेंगे, जबकि 'दक्षिणी भारत' शब्द का इस्तेमाल दोनों क्षेत्रों के लिये, और उत्तर भारत से अलग करके देखे जाने वाले क्षेत्रों के लिये, करेंगे, आप इस क्षेत्र के इतिहास और समाज के अध्ययन में जितने गहरे उतरते जायेंगे, आपको इन भेदों का महत्व और अधिक समझ में आता जायेगा।

खण्ड सात में आप दक्खन और दक्षिण भारत में मौर्य काल और उत्तर मौर्य काल में होने वाले राजनीतिक विकास के बारे में पढ़ चुके हैं। आपने ध्यान दिया होगा कि दक्खन तो मौर्य साम्राज्य में शामिल था, और भारत की प्रमुख रियासतें–अर्थात् चोला, पांड्या, चेरा और सतियापुत्रों की रियासतें–मौर्यों की मित्र और पड़ोसी थी। उत्तर मौर्य काल के, प्रारम्भिक दौर में राजा की उपाधि वाले छोटे-छोटे सरदार दक्खन में उभरे और दक्खन को, अपने आपको "दक्खन के स्वामी" कहने वाले, सतवाहनों ने अपने में मिला लिया। दक्षिण में भी, रियासतों में महत्वपूर्ण बदलाव हो रहे थे, जिसके फलस्वरूप आने वाले काल में राज्य व्यवस्थाओं का उदय हुआ। इस इकाई में आप दक्खन में उत्तर-सतवाहन काल (तीसरी शताब्दी की शुरुआत) से आठवीं शताब्दी तक विकसित होने वाली राजनीतिक स्थिति के बारे में पढ़ेंगे।

35.2 मध्य छठवीं शताब्दी तक दक्खन की राजनीतिक स्थिति

सतवाहनों के पतन के बाद दक्खन पर एक वंश का राजनीतिक कब्जा खत्म हो गया। कई राज्य अलग-अलग क्षेत्रों में सतवाहनों के उताराधिकारियों के रूप में उभर कर आये। उत्तरी महाराष्ट्र में हम अमीरों को देखते हैं, जिन्होंने कुछ समय तक शक राज्यों में सेनापतियों का काम किया, और मध्य तीसरी शताब्दी में एक राज्य की स्थापना की। उसकी स्थापना ईश्वरसेन ने की, जिसने 248-49 ई. में एक युग की शुरुआत की। बाद में यह युग बहुत महत्वपूर्ण हो गया और इसे कलचुरी चेदा युग के नाम से जाना गया।

35.2.1 विदर्भ (महाराष्ट्र)

महाराष्ट्र पठार पर जल्दी ही वकटक हावी हो गये। उन्होंने तीसरी शताब्दी की अंतिम चौथाई से छोटे राजाओं के रूप में शुरुआत की, लेकिन तेजी से अपनी ताकत बढ़ा ली और महाराष्ट्र के अधिकांश भाग और उससे लगने वाले मध्य प्रदेश के भागों पर अपना कब्जा कर लिया। वकटकों की दो शाखाएं थीं जो अलग-अलग क्षेत्रों में राज्य कर रही थीं। मुख्य शाखा तो पूर्वी महाराष्ट्र (विदर्भ क्षेत्र) से राज करती थी, जबकि वककरों की घाटी शाखा के नाम से जानी जाने वाली एक सहयोगी शाखा दक्षिणी महाराष्ट्र में राज करती थी। सबसे मशहूर वकटक राजा मुख्य शाखा का प्रवरसेन प्रथम हुआ। सम्राट की उपाधि वकटकों में केवल प्रवरसेन प्रथम के पास ही रही। उसने कई वैदिक यज्ञ किये और ब्राह्मणों को कई भूमिदान भी किये। कुल मिला कर वकटक लोग शांति प्रिय रहे, और उन्होंने अपने शक्तिशाली पड़ोसियों जैसे उत्तर में गुप्त, पूर्वी दकन में विष्णुकुंडी और दक्षिण में कदम्ब के साथ शादी विवाह के और राजनयिक रिश्ते कायम किये। लेकिन छठवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में कलचुरियों और कादम्बों के अपने अपने क्षेत्र बना लेने से इस राज्य को टूटने और कमजोर होने से बचाया नहीं जा सका। मध्य छठवीं शताब्दी तक आते-आते दक्खन की बड़ी शक्ति के रूप में बादमी के चालुक्यों ने उनके पांव उखाड़ दिये।

35.2.2 कर्नाटक

उत्तरी कर्नाटक (उत्तर कन्नड़) की तटीय पट्टी और साथ के क्षेत्रों में चुटुओं ने एक छोटा राज्य बना लिया। उन्होंने चौथी शताब्दी के मध्य तक राज किया, फिर कदम्बों ने उन्हें उखाड़ फेंका। इस राज्य की स्थापना मशहूर मयूरसरमन ने की। मयूरसरमन छापापार लड़ाई में माहिर था और उसने कांची के पल्लवों को अपनी प्रभुसत्ता मानने पर मजबूर कर दिया। फिर उसने अश्वमेध यज्ञ किये और मयूरसरमन से मयूरवर्मन, याने ब्राह्मण से क्षत्रिय बन गया (बर्मन क्षत्रिय वर्ग सूचक नाम था, जबकि सरमन ब्राह्मण वर्ग सूचक)। कदम्ब राज्य के इतिहास की शुरुआत में उसका बंटवारा परिवार की दो शाखाओं के बीच हो गया, और वैजयंती (बनवासी) तथा पलसिका (हलसी) राजधानियाँ बनी। दोनों शाखाएँ कभी आपस में शांति बना कर नहीं रही, और दोनों पर उनके अधिक शक्तिशाली पड़ोसियों–पल्लवों, पश्चिमी गंगा, और सबसे अधिक, बादमी के चालुक्यों का खतरा रहा। चालुक्यों ने धीरे-धीरे उनकी भूमि हड़पनी शुरू कर दी, और 575 ई. तक आते-आते उन्हें बिल्कुल हरा दिया।

35.2.3 पूर्वी दक्खन

उत्तर सतवाहन दक्खन में, राजनीतिक दृष्टि से, सबसे अधिक अशांत क्षेत्र पूर्व में पड़ने वाला उपजाऊ

कृष्णा गोदावरी डेल्टा (आंध्र डेल्टा) क्षेत्र था। यहां सतवाहनों के बाद इक्षवकु आये जिन्होंने 225 ई. से इस क्षेत्र पर राज किया। पश्चिम से अभीरों के आने पर उनके राज में विघ्न आया। लेकिन यह एक अस्थायी दौर था : इक्षवकु फिर लौटे और उन्होंने अगले लगभग पचास सालों तक राज्य किया। फिर यह क्षेत्र कई जागीरों में बंट गया। तांबे के पत्तरों पर लिखे अभिलेखों से हमें पता चलता है कि पहले बृहतफलायन गोत्र के राजा आये फिर सलंकायन गोत्र के जबकि समुद्रगुप्त की प्रशंसा करने वाली इलाहाबाद स्तंभ या प्रयागप्रस्ति की (देखिये इकाई 32) के अभिलेख से हमें इस क्षेत्र में 350 ई. के आसपास के कोई आधा दर्जन राज्यों के बारे में जानकारी मिलती है। इनमें वेंगी कुरला के राज्य शमिल हैं: उनकी राजधानियाँ पिश्तापुर और देवराष्ट्र की अवमुक्ता थी।

आंध्र डेल्टा में राजनीतिक स्थिरता पाँचवीं शताब्दी के मध्य में विष्णुकुंडियोंके आने के साथ वापस आयी। उनके वकटकों के साथ अच्छे संबंध थे, लेकिन दक्षिण कर्नाटक के पश्चिमी गंगों के साथ के साथ उनका टकराव लगातार काफी समय तक बना रहा। कई अश्वमेध यज्ञ करने वाला, इस शाखा का संस्थापक, मधुवर्मन प्रथम (440-60) ई. और मधुवर्मन द्वितीय इस शाखा के मशहूर शासकों में हैं। विष्णुकुंडियों ने सातवीं शताब्दी की पहली चौथाई में चालुक्यों के आने तक राज किया।

35.2.4 दक्षिण कर्नाटक

दक्षिण कर्नाटक में पाँचवीं शताब्दी की शुरुआत में एक वंश का उदय हुआ। इस वंश के राजा गंग या पश्चिमी गंग कहलाते हैं, ये उड़ीसा के पूर्वी गंगों से अलग थे। पश्चिमी गंगों ने अलगे छह सौ सालों में शासन किया। इतने लम्बे संबंध के कारण यह क्षेत्र गंगवाड़ी कहलाने लगा। गंगवाड़ी एक अलग-अलग क्षेत्र है। पहाड़ियों से घिरा ये क्षेत्र कृषि की दृष्टि से कहीं कम सम्पन्न हैं। इन्हीं दोनों कारणों से गंग लोग बिना अधिक बाहरी हस्तक्षेप के इतने लम्बे समय तक शासन कर सके। बहरहाल, सैनिक महत्व की दृष्टि से उनकी स्थिति लाभकर थी। उन्होंने बाद में पल्लवों और चालुक्यों के टकराव में एक बहुत अहम भूमिका अदा की वे इन टकराओं में चालुक्यों के साथ रहे उन्होंने पल्लवों और पांड्यों के टकराव में भी अहम भूमिका निभायी। उनके सम्बन्ध पल्लवों के साथ आमतौर पर अच्छे नहीं रहे। पहाड़ पर बने अपने किले नंदी दुर्ग से उन्होंने पल्लवों को खूब छकाया।

35.3 दक्षिण भारत की राजनीतिक स्थिति

तमिलनाडु और केरल में संगम काल का अंत तीसरी शताब्दी के अंत तक हो गया। इस क्षेत्र का चौथी से छठवीं शताब्दी तक का इतिहास बहुत अस्पष्ट है। पल्लवों का शुरुआती इतिहास इसी काल का है। हमें उनके कांची से जारी किये गये तांबे के पत्तर वाले अभिलेख मिलते हैं। पल्लवों के राज्य का संबंध परम्परा से कांची क्षेत्र (पालर नदी की घाटी) या टोंडईमंडलम (टोंडई, पल्लव का तमिल पर्यायवाची है) के साथ रहा। लेकिन ऐसा लगता है कि इस दौर में कांची क्षेत्र उनके कब्जे में नहीं था क्योंकि उन्हें कालभ्र नाम की पहाड़ी जनजाति ने उत्तर की तरफ खदेड़ दिया था।

दरअसल, संगम काल के अंत से छठवीं शताब्दी के मध्य तक तमिलनाडु और केरल पर कालभ्रों का कब्जा था, हमें उनके बारे में अधिक जानकारी नहीं है, लेकिन जो भी थोड़ी बहुत जानकारी उपलब्ध है उसके अधार पर यह कहा जा सकता है किं वे ब्राह्मणों की संस्थाओं के खिलाफ थे और बौद्ध और जैन धर्मों के समर्थक थे, उन्होंने संगम युग के चेलों, चोलों और पांड्यों के राज को खत्म कर दिया, और वे ऐसी गैर खेतिहर पहाड़ी जनजातियों के लोग थे जिन्होंने बसी बसाई खेतिहर आबादी में भारी तबाही मचाई। ऐसा लगता है कि कालभ्रों ने उत्तर कर्नाटक में आने वाली चालुक्य राज्य की सीमाओं तक अपना विस्तार कर लिया था क्योंकि वे यह दावा करते हैं कि इन्होंने भी उन्हें हराया था। इस काल को "कालभ्र अन्तराल" के नाम से जाना जाता है।

35.4 चालुक्यों, पल्लवों और पांड्यों का उदय

छठवीं शताब्दी के मध्य से, दकन और दक्षिण भारत को राजनीति पर तीन शक्तियों की गतिविधियों का बोलबाला रहा। बादमी के चालुक्य कांची के पल्लव और मदुरा के पांड्या।

35.4.1 चालुक्य

पुलकेसिन प्रथम के राज्य के साथ चालुक्य एक प्रभुतासपन्न शक्ति बन गये। उसने कर्नाटक के बीजापुर जिले में बादमी के पास 543.4 ई. में एक मजबूत दुर्ग बनवाकर, अपने राज्य की बुनियाद डाली, और एक अश्वमेध यज्ञ किया। उसके उत्तराधिकारियों ने कदम्बों को उखाड़ फेंका और धीरे-धीरे उनके राज्य को अपने मे मिला लिया, और कोंकण (महाराष्ट्र की तटीय पट्टी) के मौर्यों को भी अपने अधीन कर लिया। पुलकेसिन द्वितीय के अभियानों के साथ चालुक्य दक्खन की सबसे बड़ी शक्ति बन गये। क्योंकि दक्षिण में पश्चिमी गंगों और अलुपों ने और लाटों, मालवों तथा गुर्जरों ने उत्तर में उसकी अधीनता स्वीकार कर ली। पुलकेसिन द्वितीय की सेना ने हर्षवर्धन की सेनाओं को नर्वदा के तट पर रोक दिया।

पुलकेशन द्वितीय ने आध्र डेल्टा के विष्णु कुंडियों को भी हटा दिया। लेकिन वह केवल अधीनता की माग से संतुष्ट नहीं हुआ क्योंकि लगभग दस लाख एकड़ खेती योग्य भूमि वाला कृष्णा-गोदावरी डेल्टा अपने आप में एक बहुत ही कीमती सम्पदा था। इसलिए 621 ई. के आसपास उसने अपने छोटे भाई विष्णुवर्धन को अपनी जीत मजबूत करने और डेल्टा को अपने कब्जें में करने के लिए भेजा। 631 ई. में विष्णुवर्धन को अपना राज्य कायम करने की इजाजत मिल गई। इस तरह, बेंगी के चालुक्यों या पूर्वी चालुक्यों का वंश चला जिसने पांच सौ साल से भी ज्यादा समय तक इस क्षेत्र पर कब्जा बनाये रखा।
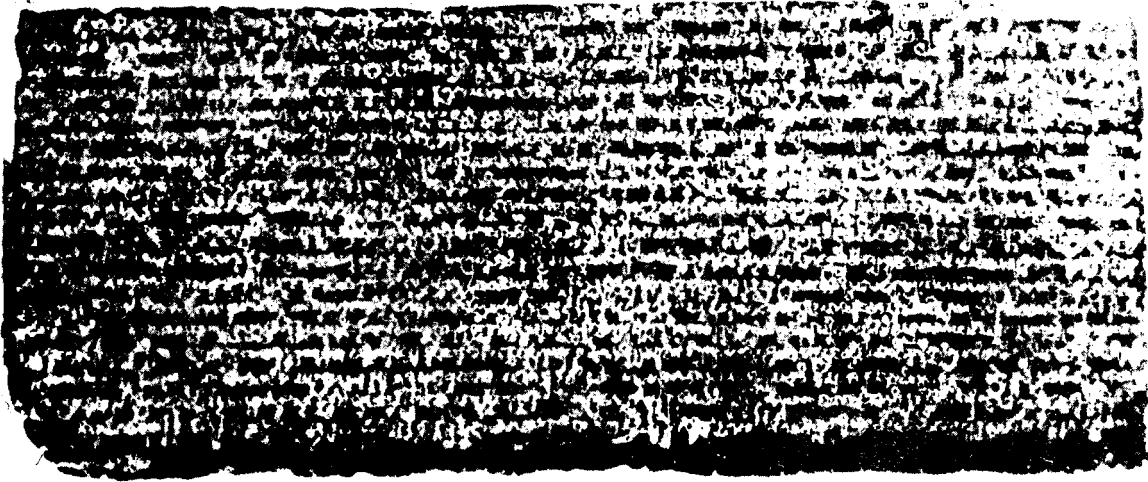
9. पुलकेशन द्वितीय का अहिहोल अभिलेख

35.4.2 पल्लव

पल्लवों का उदय छठवीं शताब्दी के मध्य के आसपास सिंहविष्णु के साथ हुआ। उसने टोंडईमंडलम (कांची क्षेत्र) में कालभ्र अंतराल का खत्म कर दिया और अपने राज्य का विस्तार दक्षिण में कावेरी डेल्टा तक कर लिया। उसके बाद महेन्द्रवर्मन प्रथम आया, उसने उत्तर में कृष्णा नदी तक के क्षेत्रों को अपने में मिला लिया। पल्लव राजाओं ने पड़ोस के सरदारों और राजाओं को भी अपने अधीन कर लिया और इस तरह के बादमी के चालुक्यों, और पांड्यों, के प्रभाव क्षेत्र में पहुंच गये। पांड्यों तक को कुछ अरसे के लिए उनकी अधीनता में रहना पड़ा। इस तरह सातवीं शताब्दी के मध्य तक पल्लवों के दक्षिण भारत में एक शक्तिशाली क्षेत्रीय राज्य कायम कर लिया था। उनकी शक्ति आठवीं शताब्दी के मध्य में दक्खन में चालुक्यों की जगह पर राष्ट्रकूटों के आने के साथ कमजोर होने लगे। दसवीं शताब्दी के शुरुआत तक, अपराजत के चोल प्रथम से हारने के साथ, पल्लवों राज्य का अंत हो गया।

35.4.3 पांड्या

छठवीं शताब्दी के अंत तक पांड्य कदुंगोन के साथ उस समय प्रकाश में आए जब उसने कालभ्रमों का दमन कर दिया। पांड्यों ने तमिलनाडु के धुर दक्षिण के ज़िलों में राज किया, और वेंगई नदी की घाटी उनके राज की केंद्रीय भूमि रही। उन्होंने उत्तर में कावेरी डेल्टा पर और दक्षिण-पश्चिम में केरा (केरल) पर अपना कब्ज़ा बढ़ाने की लगातार कोशिश की।

35.4.4 अन्य शक्तियाँ

गंगों का दक्षिण कर्नाटक में गंगवाड़ी पर शासन चलता रहा। इसके अलावा, उस समय दक्खन और दक्षिण भारत में नोलम्ब, बाणु, सिलाहर जैसे कई और छोटे-छोटे राज्य और रियासतें भी थीं। उत्तर भारत की तरह यहां दूर तक लगातार फैली घटियां या मैदान नहीं हैं। रायचूर दोआब (तुंगभद्र और कृष्णा के बीच), कृष्णा गोदावरी डेल्टा, निचली कावेरी घाटी और वेंगई घाटी जैसी बड़ी नदी-घाटियों को उबड़-खाबड़ पहाड़ी क्षेत्रों ने एक-दूसरे से काट रखा है। इसके अलावा, खेती करने वाले क्षेत्रों को विभाजित करने वाले बड़े-बड़े जंगल भी थे। इस सबसे राजनीतिक विभाजन को बढ़ावा मिला और छोटी-छोटी राजनीतिक ताकतें अलग-थलग पड़े क्षेत्रों में पनप सकीं। ऊपर जिन अहम नदी घाटियों का उल्लेख किया गया है वे बादमी (रायचूर दोआब) के चालुक्यों पल्लवों (पालार नदी घाटी) आदि अधिक बड़े राज्यों का साथ देने की स्थिति में थीं, और उन्होंने ऐसा किया भी, लेकिन इन क्षेत्रीय राज्यों में से किसी के लिए भी बाकी राज्यों पर अपना कब्जा जमाना मुश्किल काम था, उत्तरी भारत के राज्यों से भी ज्यादा मुश्किल काम। आगे चलुक्यों, पल्लवों और पांड्यों के आपसी टकराव का जो वर्णन किया जा रहा है, उससे यह स्थिति और भी स्पष्ट हो जाती है।

35.5 विभिन्न शक्तियों में टकराव

इस काल का इतिहास बादमी के चालुक्यों तथा पल्लवों के बीच, और पांड्यों और पल्लवों के बीच अक्सर होने वाली लड़ाइयों से रंगा पड़ा है। दुश्मनी की शुरुआत चालुक्य वंश के पुलकेसिन द्वितीय के हमले से हुई, जिसने महेन्द्र वर्मन को हराकर पल्लव राज्य के उत्तरी भाग पर कब्जा कर लिया। एक और अभियान में उसने (रायलसीमा में पल्लवों के सामंतों) बानों को हरा दिया और एक बार फिर कांची को धमकी दे डाली। लेकिन, महेन्द्र वर्मन के उत्तराधिकारी नरसिंह वर्मन प्रथम ने कई लड़ाइयों में उसे बुरी तरह हराया। नरसिंह वर्मन ने उसके बाद चालुक्यों पर हमला कर वादमी को हथिया लिया और शायद पुलकेसिन द्वितीय को मार भी दिया। पुलकेसिन द्वितीय के बेटे विक्रमादित्य प्रथम ने स्थिति को संभाला। उसने पल्लवों को खदेड़ दिया, पांड्यों के साथ गठबंधन किया, और पल्लवों के राज्य पर बार-बार हमले किये। इस संदर्भ में, उसके एक उत्तराधिकारी, विक्रमादित्य द्वितीय, का राज्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है, क्योंकि उसके बारे में कहा जाता है कि उसने तीन बार कांची को रौंदा और लूटा।

विशेष युद्धों और छोटी लड़ाइयों के विस्तार में न जा कर, यहां हम बस इतना ध्यान में रख सकते हैं कि पल्लवों को पांड्यों के साथ भी लड़ाइयां लड़नी पड़ी।

यह बात गौर करने लायक है कि इन टकरावों में हर बार निशाना पल्लव ही बने। इसका केवल यह कारण नहीं था कि वे चालुक्यों और पांड्यों के बीच स्थित थे, बल्कि इसका मुख्य कारण यह था वे सबसे अधिक संपन्न थे। यह बात अपने आप में अहम है कि हमेशा चालुक्यों ने ही पल्लवों पर हमला किया और पल्लवों की चिंता बस उन्हें वापस उनके राज्य में धकेल देने की रही। इसका अकेला अपवाद था नरसिंह वर्मन प्रथम का चालुक्य राज्य पर हमला और इसकी राजधानी पर उसका कब्जा। लेकिन यह एक बदले की कार्यवाही थी, और टकराव के इस इतिहास में यह बस एक बार हुआ।

एक और बार पल्लव परमेश्वर वर्मन प्रथम ने ध्यान हटाने की कार्यवही के तौर पर चालुक्यों की राजधानी के खिलाफ अभियान छेड़ा था। परमेश्वर वर्मन ने अपनी राजधानी पर कब्जा किये चालुक्यों की सेनाओं से पीछा छुड़ाने के लिये उनका ध्यान वहां से हटाने की गरज से यह कार्यवाही की थी।

पांड्यों के बारे में भी यह सही है, जिन्होंने कावेरी डेल्टा के कब्जे के लिये बार-बार पल्लवों के साथ लड़ाई की। संगम साहित्य और ह्वेन सांग के वर्णन से यह पता चलता है कि पांड्यों के राज्य की केन्द्र–वेगई नदी-घाटी खेती की दृष्टि से कहीं बदतर थी। पांड्यों ने अवश्य ही यह महसूस किया होगा कि अगर वे अमीर और शक्तिशाली होना चाहते हैं तो, उन्हें संपन्न कावेरी डेल्टा पर कब्जा करना होगा। लगता है दिमाग में इसी मकसद को रखकर उन्होंने पल्लवों से लड़ाई की होगी, और नौवीं शताब्दी के शुरूआती दौर तक उन्होंने आखिर इस क्षेत्र पर कब्जा कर ही लिया था।

35.5.1 छोटे राजाओं की भूमिका

छोटे राजाओं और सरदारों ने क्षेत्रीय राज्यों के टकराव में इस या उस शक्ति के अधीनस्थ सहयोगियों के तौर पर हिस्सा लिया। पुलकेसिन द्वितीय को नरसिंह वर्मन प्रथम पर हमला करने से पहले पल्लवों के सहयोगी बाणों को शांत करना पड़ा था। इसी तरह, पल्लवों के सेनापति ने सबरा के राजा उदयन और निषादों के

सरदार पृथ्वीव्याघ्र के साथ लड़ाई लड़ी, जो शायद चालुक्यों का साथ दे रहे थे। इन अधीनस्थ सहयोगियों ने केवल लूट में ही हिस्सेदारी नहीं की, बल्कि अपने राज्यों में नये क्षेत्र भी मिला लिये।

छोटे राज्यों को अलग से देखने पर हम उनमें कुछ विशेष ध्यान देने योग्य नहीं दे पाते ऐसा इसलिए है क्योंकि हर छोटे राज्य की अपने आपमें कोई अहमियत नहीं थी, उनकी स्थिति छुट की सी थी। लेकिन उन्हें साथ मिला कर देखने पर, वे सचमुच दक्खन और दक्षिण भारत के मामलों में एक जबरदस्त राजनीतिक शक्ति के रूप में सामने आते हैं यह तथ्य भी अपने आप में इतना ही उल्लेखनीय है कि चौथी से नवीं शताब्दी तक कोई भी राजा दक्खन और दक्षिण भारत पर अपना कब्जा नहीं कर पाया। इन छह शताब्दियों तक, कई राजाओं की उत्साही कोशिशों और महत्वाकाक्षाओं के बावजूद आय स्थिति राजनीतिक फूट में भी, और छोटे राजाओं तथा सरदारों की अहमियत में भी।

35.5.2 राजनीतिक टकराओं के अन्य आयाम

पल्लवों और चालुक्यों के आपसी टकराव का एक अहम नतीजा रहा लता या दक्षिण गुजरात के चालुक्यों की राजधानी का उदय, नरसिंहवर्मन के बादमी पर कब्जे और पुलकेसिन द्वितीय की मौत के परिणामस्वरूप, चालुक्य राज्य में भयंकर गड़बड़ी और राजनीतिक अव्यवस्था फैल गयी। इसकी एकता को बहाल करने तथा विघटनकारी शक्तियों का दमन करने के काम में, और चालुक्यों को खदेड़ने के काम में, विक्रमादित्य प्रथम को उसके छोटे भाई जयसिंहवर्मन ने बहुत मदद दी। बदले में विक्रमादित्य ने उसे दक्षिण गुजरात उपहार में दे दिया।

35.5.3 अन्य देशों के साथ संबंध

इस समय की दक्षिण भारत की राजनीति की एक अहम विशेषता थी श्रीलंका के मामलों में सक्रिय दिलचस्पी, चालुक्यों के साथ लड़ाई में हमें सुनने को मिलता है कि नरसिंहवर्मन प्रथम की तरफ लंका का एक राजकुमार मारवर्मन था। उसे देशनिकाला दे दिया गया था और उसने पल्लवी दरबार में शरण ली थी। बादमी से लौटने के बाद नरसिंहवर्मन ने दो नौ सैनिक अभियान भेज कर मारवर्मन को अनुराधापुर का सिंहासन हासिल करने में मदद दी। बाद में, जब मारवर्मन से एक बार फिर उसका राज्य छिन गया तो, उसने पल्लव राजा से ही मदद ली। पांड्या भी श्रीलंका में गहरी दिलचस्पी रखते थे, जिसकी संपदा के लालच में उन्होंने इस क्षेत्र पर लूटपाट के इरादे से हमले किये।

पल्लवों के बारे में ऐसा लगता है कि उन्होंने दक्षिण पूर्व एशिया की राजनीति में दिलचस्पी ली और उसे प्रभावित भी किया। यह संभव है कि नंदीवर्मन द्वितीय पल्लवमल्ल ने दक्षिण पूर्व एशिया से आकर आठवीं शताब्दी के मध्य में पल्लवों के सिंहासन का उत्तराधिकार लिया। हमें नंदीवर्मन द्वितीय के शक्तिशाली जहाजी बेड़े के बारे में भी सुनने को मिलता है, और थाईलैंड में उपलब्ध एक दस्तावेज में एक विष्णु मंदिर और एक तालाब पर उसकी एक उपाधि का उल्लेख मिलता है। बहरहाल, दक्षिणपूर्व एशिया में और अधिक प्रत्यक्ष हस्तक्षेप चोलों के साथ हुआ, जिन्होंने दक्षिण भारत में पल्लवों के प्रभुत्व को समाप्त कर दिया।

35.5.4 केरल

ऐसा लगता है कि इस काल में केरल पर पेरूपलों का राज रहा, हालांकि इस काल के राजनीतिक इतिहास का ब्यौरा नहीं मिलता। इस वंश का एक मशहूर शासक चेरामन पेरूपल (आठवीं शताब्दी के अंतिम वर्ष/नवीं शताब्दी के शुरुआत वर्ष) था। संभवतः उसने अपने धर्म और धार्मिक नीति का कुछ असाधारण ढंग से पालन किया, जिससे जैन, ईसाई, शैव और मुसलमान केवल एक संरक्षक के रूप में उसकी प्रशंसा नहीं करते, बल्कि यह दावा भी करते हैं कि वह उनके अपने धर्म को मानता भी था। मालाबार की संपन्नता ने बाहरी हमलावरों को हमेशा अपनी और खींचा। न केवल पांड्या केरल हो हारने का दावा करते हैं। बल्कि यही दावा नरसिंहवर्मन, कई चालुक्य राजा, और बाद में जाकर राष्ट्रकूट भी करते हैं।

बोध प्रश्न 1

1) निम्न वक्तव्यों में से कौन-सा वक्तव्य सही (√) है और कौन-सा गलत (×)

   क) सतवाहनों के पतन के बाद दकन पर एक ही वंश का राजनीतिक कब्जा बना रहा।

   ख) वकटक शांति प्रिय लोग लगते हैं।

   ग) संगम काल के पतन के बाद तमिलनाडु और केरल पर कालभ्रों का कब्जा रहा।

घ) दक्षिण भारत में टकरावों में निशाना पल्लव ही रहे।

च) मालाबार की संपन्नता ने हमलावरों को अपनी तरफ नहीं खींचा।

2) चालुक्यों, पल्लवों, और पांड्यों के बारे में आप क्या जानते हैं? लगभग दस पंक्तियों में लिखें।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

3) दक्षिण भारत की शक्तियों के टकराव किस किस्म के थे, विवेचना कीजिये। इसमें छोटे राजाओं की क्या भूमिका रही? लगभग दस पंक्तियों में उत्तर दें।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

35.6 राजनीतिक संगठन

आइये इन राज्यों के राजनीतिक संगठन की संक्षेप में चर्चा कर ली जाये।

35.6.1 राजा और प्रशासन का उच्चतर वर्ग

अब हम यह विवेचना करेंगे कि इन राज्यों में किस किस्म का प्रशासन परया जाता था। सिद्धांत में तो राजा सभी अधिकारों का स्रोत होता था। उसके पास महाराजा, भट्टरक, धर्ममहाराजाधिराज जैसी ऊंची लगने वाली उपाधियां होती थी। शुरुआत में राजशाही वैदिक आदर्श से चलती थी। हमें राजाओं के अभिलेखों में यह घोषणा मिलती है कि उन्होंने अश्वमेध यज्ञ कर, या वाजपेय यज्ञ या राजसूय यज्ञ किये। इस दौर में इन यज्ञों की वह सामाजिक अहमियत नहीं थी जो आगे चल कर वैदिक काल में बनी। लेकिन उनका एक विशेष राजनीतिक अर्थ था क्योंकि वे राजा विशेष की स्वाधीनता को रेखांकित करते थे और उसके शासन करने के अधिकार को उचित ठहराने वाले थे। इस तरह, चालुक्य राज्य के संस्थापक पुलकेसिन प्रथम ने अपने वंश के शासन की शुरुआत दिखाने के लिये एक अश्वमेध यज्ञ किया। बहुत से अन्य राजाओं ने भी यही किया। बहरहाल, धार्मिक माहौल बदलने के साथ, धीरे-धीरे राजशाही के आदर्श में भी बदलाव आया और राजसी वैदिक यज्ञों की रीति भी खत्म हो गयी।

दरबार में राजा की मदद के लिये मंत्री होते थे युवराज और शाही परिवार के अन्य सदस्य ऊंचे स्तरों पर सरकार चलाने के काम में अहम हिस्सेदारी करते थे। फिर अलग-अलग ओहदों वाले कई अधिकारी होते थे जो राजा के नाम पर प्रशासन के विभिन्न कामों को अंजाम देते थे। उनका एक अहम काम होता था करों को इकठ्ठा करना। एक मुख्य भूमि कर होता था जो उत्पाद का छठवां भाग या उससे ज्यादा होता था. इसके अलावा कई विविध कर थे, जैसे कपड़ा बनाने वालों, मवेशियों, शादी की दावतों आदि पर लगने वाले कर। कर इकठ्ठा करने के अलाला राज्य के अधिकारी कानून और व्यवस्था बनाये रखने का काम करते थे और उनके सामने लाये जाने वाले अपराध और दीवानी झगड़ों के मामलों को भी निपटाते थे।

35.6.2 प्रशासनिक इकाइयाँ

राज्य को प्रशासनिक इकाइयों के श्रेणीबद्ध सोपान में बांटा जाता था। दक्खन में इन इकाइयों को विषय, आहार, राष्ट्र आदि कहा जाता था। आठवीं शताब्दी से दक्खन में राज्यों को दस-दस गांवों के गुणकों में बांटने की रीति की शुरुआत हुई। एक जिले में बारह गाांव होते थे। पल्लव राज्य में नाडु प्रशासन की मुख्य, स्थायी इकाई के रूप में उभरा।

इस काल के राजाओं ने कृषि और उनकी संपदा तथा शक्ति के मुख्य आधार, राजस्व की अहमियत को पहचाना यह अपने आप में एक अहम बात है कि पल्लव काल में (और बाद में चोलकाल में) बुनियादी राजनीतिक इकाई नाडु का मतलब खेती योग्य भूमि भी होता था, जो काडु या खेती के अयोग्य भूमि से अलग थी। इसलिए, राज्य खेती के प्रसार को बढ़ावा देने की हर संभव कोशिश करता था। कदम्ब वंश के राजा प्रयूरसरमन के बारे में कहा जाता है कि उसने दूर-दूर से ब्राह्मणों को बुला कर बड़ी-बड़ी अनजुती जमीनों को खेती योग्य भूमि में बदल दिया। शायद इसी उद्देश्य से एक पल्लव राजा ने एक हजार हल दे डाले थे। इसके अलावा, क्योंकि दक्षिण भारत में खेती बहुत हद तक सिंचाई पर निर्भर करती थी, इसलिये पल्लवों ने नहरें, तालाब, झीलें और बड़े-बड़े कुएं बनवाने और उनकी संभाल में बहुत दिलचस्पी ली।

35.6.3 स्थानीय संगठन

दक्षिण भारतीय राज्यतंत्र, विशेषकर पल्लवी राज्यतंत्र, की एक आम विशेषता थी जन जीवन के सबसे अहम पहलुओं में स्थानीय सामूहिक एककों की अहमियत। ऐसे अनगिनत स्थानीय समूह और संगठन थे जिनका आधार जाति, दस्तकारी, व्यवसाय या धर्म होता था। इस तरह, दस्तकारों के संगठन थे, जैसे जुलाहों, तेलियों के संगठन, नंदेसी जैसे व्यापारियों के संगठन, मनीग्रामम और पांच सौ अय्यावोल के संगठन, विद्यार्थियों के, साधुओं के, मंदिर के पुराहितों आदि के संगठन। इसके अलावा, तीन अहम क्षेत्रीय संस्थायें थीं : उर, सभा और नगरम। उर एक गैर-ब्राह्मण ग्राम सभा थी, सभा एक ऐसी ग्राम सभा थी जिसमें केवल ब्राह्मण होते थे, और नगरम एक ऐसी सभा थी जहां व्यापारिक हितों का बोलबाला होता था। (नगरम के कुछ खेती संबंधी हित भी होते थे)। हर सभा के सदस्य साल में एक बार मिलकर बैठते थे, जबकि दिन प्रति दिन के कामों को देखने के लिये एक छोटा अधिशासी निकाय था। हर समूह स्वायत्तता के साथ और प्रथा तथा रीति पर आधारित अपने संविधान के अनुसार काम करता था, और स्थानीय स्तर पर अपने सदस्यों की समस्याओं का समाधान भी करता था। उन मामलों में, जिनका प्रभाव एक से अधिक सभाओं या संगठनों पर पड़ता था, निर्णय आपसी सलाह-मशविरे से होता था।

सामूहिक इकाइयों के जरिये चलने वाले स्थानीय प्रशासन से सरकार का भार काफी हल्का हो जाता था। इससे जनता को न केवल अपनी शिकायतें और समस्याएं कहने का मौका मिलता था, बल्कि इससे जनता पर खुद उनकी शिकायतें को दूर करने और समस्याओं को सुलझाने की जिम्मेदारी भी डाली जाती थी। इस तरह से राज्य का विरोध कम से कम होने के कारण उसका आधार भी मजबूत होता था क्योकि लोग सरकार को इन मामलों के लिये जिम्मेदार नहीं ठहरा सकते थे।

इसीलिये हमें पल्लव राजा स्थानीय स्वायत्तशासी सामूहिक संगठनों के काम में दखलंदाजी करते दिखाई नहीं देते। लेकिन वे अपना आधार मजबूत करने की कोशिश जरूर करते थे, इसके लिये वे ब्राह्मणों को बुलाते थे, और विशेष अधिकार प्राप्त ब्राह्मण बस्तियां बनाते थे, ब्राह्मणों को भूमिदान करते थे। यह भूमिदान या तो प्रत्यक्ष (ब्रह्मदान) या किसी मंदिर के नाम पर (देवदान) होता था। पल्लव राज्य के केन्द्रीय क्षेत्रों में हर जगह ऐसी ब्राह्मण बस्तियां बसायी गयीं, ये केन्द्रीय क्षेत्र सिंचित धान की खेती वाले संपन्न क्षेत्र होते थे; जिनकी संपन्नता पर पल्लवों की शक्ति निर्भर करती थी। जैसा कि हम देख चुके हैं, ब्राह्मणों की ग्राम सभा सभा या महासभा कहलाती थी। बाद के पल्लव काल के दौरान सभा ने समितियों के माध्यम से शासन करने की व्यवस्था बनाई इसे समिति व्यवस्था या वरीयम व्यवस्था कहा जाता है यह दक्षिण भारत की ब्राह्मण बस्तियों में स्वायत्त शासन की एक विशेषता बन गयी। सभा, अधिकांश तौर पर इन समितियों के जरिये,

कई काम निपटाती–थी- जैसे, तालाबों और सड़कों की संभाल, धर्मार्थ दानों और मंदिर के मामलों का प्रबंध, और सिंचाई के अधिकारों को नियमित करना।

दक्खन में, स्थानीय संगठनों और सभाओं की भूमिका कहीं कम स्पष्ट थी। सामूहिक संस्थाओं की जगह स्थानीय महाजन चालुक्यों के समय में गांवों और कस्बों में स्थानीय प्रशासन में हिस्सा लेते थे। गांवों में महाजनों का एक नेता होता था जिसे गमुंडा (या, मुखिया) कहते थे। इन महाजनों के पास दक्षिण भारतीय सभाओं जैसी स्वायत्ता तो नहीं थी, लेकिन राज्य के अधिकारियों की उन पर नजदीकी देख रेख होती थी।

बहरहाल, ब्राह्मण बस्तियां पूरे दक्खन और दक्षिण भारत में भी मिल जाती थीं। हमें यह तो ठीक-ठीक नहीं पता कि दक्खन के ब्राह्मण अपने सामूहिक मामलों को किस तरह चलाते थे। लेकिन क्योंकि वे सभी राजाओं और सरदारों के बनाये होते थे, इसलिये यह जरूर कहा जा सकता है कि वे बस्ती में सरकार के हितों का ध्यान रखते होंगे।

35.7 विभिन्न श्रेणी के शासकों के संबंध

बड़े राजाओं और उनके छोटे स्तर के मित्रों या सहयोगियों के संबंध को लेकर मतभेद हैं। व्यापक दौर पर, शक्तिशाली राजाओं, और छोटे राजा या सरदार किसी बड़े राजा को, विशेषकर पल्लवों को, धर्म के आधार पर अपना अधिपति मानते थे। पल्लव राजा बड़े धार्मिक उत्सवों में हिस्सा लेते थे जिससे उन्हें एक ऊंची कर्मकांडी स्तर प्राप्त था। इसी ऊंचे कर्मकांडी स्तर का सम्मान छोटे राजा और सरदार करते थे। इस मत का कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहीं मिलता। इस मत से यह बात समझ में नहीं आती कि ये छोटे राजा पल्लवों के प्रति सम्मान को चालुक्यों के प्रति सम्मान में कैसे बदल सके, या अस्थिर राजनीतिक स्थितियों वे किसी ऊंचे कर्मकांडी स्तर वाले राजा का सम्मान करना क्यों बंद कर देते थे और अपनी स्वाधीनता का ऐलान कर देते थे, या दुबारा क्यों वे दबाव में आकर कर्मकांडी स्तर का सम्मान करने को बाध्य हो जाते थे।

दूसरा मत इन छोटे राजाओं और सरदारों को बड़ी शक्तियों के सामंतों के रूप में मानता है। लेकिन सामंत एक तकनीकी शब्द है जिसका इस्तेमाल मध्ययुगीन पश्चिमी यूरोप में पाये जाने वाले एक विशेष किस्म के संबंध के लिये होता है। हम निश्चित तौर पर नहीं कह सकते कि क्या ऐसा ही संबंध पल्लवों या चालुक्यों और छोटे राजाओं और सरदारों के बीच भी था। इसीलिए हमने छोटी राजनीतिक शक्तियों के बड़ी राजनीतिक शक्तियोंके साथ संबंध के लिये "अधीनस्थ सहयोगी" जैसे तटस्थ शब्द को वरीयता दी है।

बोध प्रश्न 2

1) प्रशासन में स्थानीय संगठनों की भूमिका की विवेचना करें। लगभग दस पंक्तियों में उत्तर दें।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

2) विभिन्न श्रेणी के शासकों के बीच संबंधों की विशेषता बतायें। लगभग दस पंक्तियों में उत्तर दें।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

35.8 सारांश

इस इकाई में अपने छठवीं शताब्दी के मध्य तक की दक्खन और दक्षिण भारत की राजनीतिक स्थिति के बारे में सीखा। इस काल के बाद हमें यह देखने को मिलता है कि चालुक्य, पल्लव और पांड्या क्षेत्र की बड़ी राजनीतिक शक्तियां थीं। कुछ छोटी शक्तियां भी थीं, लेकिन उनकी भूमिका बहुत महत्वपूर्ण नहीं थी। बड़ी शक्तियां लगातार आपस में टकराती रहती थीं और छोटी शक्तियां इन टकराओं में इस या उस बड़ी शक्ति के साथ रहती थीं।

जहां तक राजनीतिक संगठन का संबंध है, राजा प्रशासन का केन्द्रीय अंग होता था और दूसरे अधिकारी उसकी मदद करते थे। दिन प्रति दिन के प्रशासनिक काम में स्थानीय संगठनों की भूमिका एक महत्वपूर्ण विशेषता थी।

35.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) क) × ख) √ ग) √ घ) √ च) ×

2) उत्तर 35.4 के आधार पर दें।

3) उत्तर 35.5 के आधार पर दें।

बोध प्रश्न 2

1) उत्तर 35.6.3 के आधार पर दें।

2) उत्तर 35.7 के आधार पर दें।